INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES

ISSN 2277 – 9809 (online)
ISSN 2348 - 9359 (Print)

An Internationally Indexed Peer Reviewed & Refereed Journal

www.IRJMSH.com
www.isarasolutions.com

Published by iSaRa Solutions

भारतीय लोकतंत्र में चुनाव सुधारों की आवश्यकता: एक राजनीतिक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. बृजेश स्वरुप सोनकर,

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग,

कर्म क्षेत्र महाविद्यालय, इटावा।

सारांश (Abstract)

प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में चुनाव सुधारों की समकालीन आवश्यकता का एक राजनीतिक व विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। निष्पक्ष और पारदर्शी चुनाव किसी भी जीवंत लोकतंत्र की आधारशिला होते हैं, किंतु वर्तमान समय में भारतीय चुनावी राजनीति धनबल, बाहुबल, राजनीति के अपराधीकरण, जातिवाद और सोशल मीडिया के माध्यम से फैलने वाली भ्रामक सूचनाओं (फेक न्यूज़) जैसी गंभीर चुनौतियों से ग्रसित है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य इन विसंगतियों का राजनीतिक विश्लेषण करना और चुनावी शुचिता बनाए रखने के उपायों की खोज करना है। शोध में मुख्य रूप से गुणात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है, जिसके अंतर्गत निर्वाचन आयोग की रिपोर्टों, विधि आयोग के प्रतिवेदनों तथा विभिन्न सुधार समितियों की सिफारिशों जैसे द्वितीयक आंकड़ों का मूल्यांकन किया गया है। अध्ययन के निष्कर्ष दर्शाते हैं कि जब तक चुनावी फंडिंग में पूर्ण पारदर्शिता, राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र और आदर्श आचार संहिता को कानूनी रूप से सुदृढ़ नहीं किया जाएगा, तब तक लोकतंत्र की जड़ें मजबूत नहीं हो सकतीं। अंत में, यह शोध पत्र 'एक राष्ट्र, एक चुनाव' की प्रासंगिकता और निर्वाचन आयोग को अधिक स्वायत्तता देने जैसे व्यावहारिक नीतिगत सुझाव सुझाता है, जो भारतीय लोकतंत्र को अधिक समावेशी और विश्वसनीय बनाने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

मुख्य शब्द (Keywords) : भारतीय लोकतंत्र, चुनाव सुधार, राजनीतिक विश्लेषण, चुनाव आयोग, धनबल और बाहुबल, पारदर्शिता।

परिचय (Introduction)

भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था विश्व का सबसे बड़ा और अनूठा प्रयोग है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में निहित 'लोकतांत्रिक गणराज्य' का संकल्प केवल एक राजनीतिक ढांचा नहीं, बल्कि देश की विविधता, संप्रभुता और सामाजिक न्याय को अक्षुण्ण रखने का मूल मंत्र है। इस व्यवस्था को जीवंत और गतिशील बनाए रखने का मुख्य श्रेय भारत की चुनावी प्रणाली को

जाता है। प्रसिद्ध दार्शनिक जॉन लॉक के सामाजिक समझौते के सिद्धांत के समकालीन संदर्भ में, चुनाव ही वह माध्यम हैं जिसके द्वारा देश की जनता अपनी संप्रभुता को एक वैध सरकार के रूप में हस्तांतरित करती है। एक सशक्त लोकतंत्र में चुनाव केवल सरकार बदलने की प्रक्रिया नहीं होते, बल्कि वे जन-आकांक्षाओं के प्रकटीकरण का माध्यम होते हैं। संविधान के **अनुच्छेद 324** के तहत गठित भारत निर्वाचन आयोग (ECI) को स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने की जिम्मेदारी दी गई है। स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव लोकतंत्र की "ऑक्सीजन" हैं; यदि इसमें किसी भी प्रकार का संदूषण (Contamination) होता है, तो पूरी लोकतांत्रिक संरचना ढह सकती है। निष्पक्ष चुनाव यह सुनिश्चित करते हैं कि सत्ता का हस्तांतरण शांतिपूर्ण हो और समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति का यह विश्वास बना रहे कि उसका एक मत देश की दिशा बदल सकता है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य (Historical Perspective)

ऐतिहासिक दृष्टि से, भारत में आधुनिक चुनावी लोकतंत्र की शुरुआत **वर्ष 1951-52 के प्रथम आम चुनाव** से हुई। तत्कालीन वैश्विक राजनीतिक विश्लेषक भारत के इस प्रयोग को लेकर अत्यंत संशय में थे, क्योंकि एक विशाल, अशिक्षित और अत्यधिक गरीब आबादी वाले देश में 'सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार' (Universal Adult Suffrage) को लागू करना एक अभूतपूर्व जुआ माना जा रहा था। सुकुमार सेन के नेतृत्व में प्रथम चुनाव आयोग ने इस दुर्गम कार्य को सफलतापूर्वक पूरा कर भारतीय लोकतंत्र की मजबूत नींव रखी। शुरुआती दशकों (1950 से 1970 के दशक) में, भारतीय चुनाव मुख्य रूप से एक-दलीय प्रभुत्व (कांग्रेस प्रणाली) और वैचारिक प्रतिबद्धताओं के इर्द-गिर्द घूमते रहे। हालांकि, इस दौर में भी चुनाव काफी हद तक निष्पक्ष थे, लेकिन संगठनात्मक रूप से धीरे-धीरे कमियां उभरने लगीं। 1970 और 1980 के दशकों में भारतीय चुनावी राजनीति ने एक स्याह दौर देखा, जहां **'बाहुबल' (Muscle Power)**, बूथ कैप्चरिंग, और चुनावी हिंसा आम बात हो गई थी।

इसके बाद, **1990 का दशक** भारतीय चुनावी इतिहास का एक महत्वपूर्ण 'टर्निंग पॉइंट' (मोड़) साबित हुआ। तत्कालीन मुख्य चुनाव आयुक्त **टी.एन. शेषन (1990-1996)** के कार्यकाल में चुनाव आयोग ने अपनी संवैधानिक शक्तियों को आक्रामक रूप से लागू किया। मतदाता पहचान पत्र (Voter ID) की शुरुआत, आदर्श आचार संहिता (Model Code of Conduct) का कड़ाई से पालन और चुनावी खर्च पर निगरानी जैसे कदमों ने भारतीय चुनावों का चरित्र हमेशा के लिए बदल दिया। इसी कालखंड में इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (EVM) का प्रवेश हुआ, जिसने धीरे-धीरे मतपत्रों की चोरी और बूथ कैप्चरिंग की घटनाओं को तकनीकी रूप से समाप्त कर दिया।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य और वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में चुनावी प्रक्रिया की प्रासंगिकता

21वीं सदी के तीसरे दशक (वर्तमान 2026 के परिप्रेक्ष्य) में भारतीय चुनावी प्रक्रिया के समक्ष चुनौतियां और उसकी प्रासंगिकता पूरी तरह बदल चुकी है। आज भारत एक वैश्विक महाशक्ति और डिजिटल अर्थव्यवस्था के रूप में स्थापित है, जिसके कारण चुनावी प्रक्रिया की प्रासंगिकता और अधिक संवेदनशील हो गई है:

1. **धनबल (Money Power) और कॉरपोरेट फंडिंग का एकाधिकार:** आधुनिक चुनाव अत्यधिक खर्चीले हो चुके हैं। चुनावी बांड (Electoral Bonds) पर हालिया न्यायिक निर्णयों और उसके बाद उपजी बहसों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि गुप्त या अपारदर्शी फंडिंग लोकतंत्र की निष्पक्षता के लिए सबसे बड़ा खतरा है। चुनावी प्रक्रिया की प्रासंगिकता इस बात में है कि क्या यह आम नागरिक को बिना असीमित धन के चुनाव लड़ने का समान अवसर (Level Playing Field) प्रदान कर पाती है या नहीं।
2. **तकनीक और सोशल मीडिया का दोधारी प्रभाव:** जहां एक ओर डिजिटल तकनीक ने मतदाता पंजीकरण और परिणाम घोषणा को सुगम बनाया है, वहीं दूसरी ओर 'अल्गोरिदम-जनित ध्रुवीकरण', फेक न्यूज (भ्रामक खबरें), डीपफेक और डेटा मैनिपुलेशन ने स्वतंत्र जनमत के निर्माण को संकट में डाल दिया है। विदेशी ताकतों द्वारा सोशल मीडिया के माध्यम से घरेलू चुनावों को प्रभावित करने का जोखिम आधुनिक राजनीतिक विज्ञान का एक प्रमुख चिंताजनक विषय है।
3. **मुफ्त उपहार (Freebies) बनाम लोक कल्याण:** वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में तात्कालिक चुनावी लाभ के लिए लोक-लुभावन वादों (Freebies) की बाढ़ आ गई है। यह प्रवृत्ति न केवल देश के राजकोषीय स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचाती है, बल्कि मतदाता के विवेक को भी प्रभावित करती है।
4. **संस्थागत साख की रक्षा:** समकालीन दौर में निर्वाचन आयोग जैसी संवैधानिक संस्थाओं की स्वायत्तता, निष्पक्षता और उनके निर्णयों की पारदर्शिता पर लगातार राजनीतिक और सामाजिक सवाल उठाए जा रहे हैं। वीवीपैट (VVPAT) पर्चियों के मिलान को लेकर होने वाले विवाद इसी अविश्वास की बानगी हैं।

भारत ने भले ही मतपत्र से ईवीएम तक की तकनीकी यात्रा और बूथ कैप्चरिंग से मुक्त पारदर्शी चुनावों का सफर तय कर लिया हो, लेकिन चुनावी विसंगतियों के बदलते स्वरूप (जैसे डिजिटल कुप्रचार और अपारदर्शी वित्तीय नेटवर्क) ने चुनाव सुधारों की आवश्यकता को और अधिक अपरिहार्य बना दिया है। यही कारण है कि इस विषय का राजनीतिक और विश्लेषणात्मक अध्ययन आज के समय की सबसे बड़ी अकादमिक और व्यावहारिक मांग है।

शोध की आवश्यकता और महत्व (Need and Significance of the Study)

- **आवश्यकता:** वर्तमान समय में राजनीति के अपराधीकरण, चुनावी चंदे की अपारदर्शिता और तकनीकी चुनौतियों (जैसे- फेक न्यूज़) के कारण इस विषय पर गहन विश्लेषण की आवश्यकता है।
- **महत्व:** यह शोध पत्र नीति निर्माताओं, राजनीतिक विश्लेषकों और शोधकर्ताओं के लिए समकालीन चुनावी चुनौतियों को समझने और लोकतांत्रिक संस्थाओं को मजबूत करने में सहायक सिद्ध होगा।

समस्या का कथन (Statement of the Problem)

भारतीय लोकतंत्र ने यद्यपि दशकों से नियमित और शांतिपूर्ण सत्ता हस्तांतरण के माध्यम से अपनी परिपक्वता साबित की है, तथापि वर्तमान चुनावी प्रणाली ऐसी संरचनात्मक और प्रक्रियात्मक विसंगतियों से घिर चुकी है जो इसकी बुनियादी विश्वसनीयता और निष्पक्षता पर गंभीर प्रश्नचिह्न खड़े करती हैं। समस्या का मूल इस तथ्य में निहित है कि आधुनिक चुनावी राजनीति जन-आकांक्षाओं के प्रतिनिधित्व के बजाय कुछ विशिष्ट कुलीन वर्गों (Elites), वित्तीय शक्तियों और अनैतिक हथकंडों का बंधक बनती जा रही है।

इस शोध पत्र के अंतर्गत मुख्य समस्या का विश्लेषण निम्नलिखित अंतर्निहित कारकों के आधार पर किया गया है, जो चुनाव प्रणाली की शुचिता को खंडित करते हैं:

1. धनबल (Money Power) और चुनावी फंडिंग की अपारदर्शिता

भारतीय चुनावों में सबसे बड़ी समस्या असीमित और अनियंत्रित धन का प्रवाह है। निर्वाचन आयोग द्वारा उम्मीदवारों के लिए खर्च की कानूनी सीमा तय की जाती है, लेकिन राजनीतिक दलों के कुल खर्च पर कोई प्रभावी सीमा नहीं है। चुनावी बांड (Electoral Bonds) योजना के निरस्त होने के बाद भी, राजनीतिक दलों को मिलने वाले गुप्त कॉर्पोरेट चंदे और 'कैश इकोनॉमी' (बेनामी नकदी) का प्रभाव कम नहीं हुआ है। यह स्थिति एक आम या योग्य उम्मीदवार के लिए चुनाव लड़ने के अवसरों को समाप्त कर देती है और 'समान अवसर के सिद्धांत' (Principle of Level Playing Field) का उल्लंघन करती है।

2. राजनीति का बढ़ता अपराधीकरण (Criminalization of Politics)

संसदीय और विधानसभा चुनावों में गंभीर आपराधिक पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवारों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है। एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (ADR) के प्रामाणिक आंकड़े दर्शाते हैं कि विधायिका में ऐसे जनप्रतिनिधियों की संख्या बढ़ रही है जिन पर हत्या, अपहरण और जबरन वसूली जैसे मामले दर्ज हैं। राजनीतिक दलों द्वारा 'जिताऊ क्षमता' (Winability) के नाम पर दागी उम्मीदवारों को टिकट देना और कानून

की कमियों का लाभ उठाकर उनका दोषसिद्धि से बचना, लोकतांत्रिक संस्थाओं की साख को सीधे तौर पर कमजोर कर रहा है।

3. पहचान की राजनीति: जातिवाद, सांप्रदायिकता और ध्रुवीकरण

भारतीय चुनाव प्रणाली की एक अन्य गंभीर समस्या यह है कि विकास और लोक-नीति के वास्तविक मुद्दों के बजाय चुनाव मुख्य रूप से जातिगत समीकरणों, धार्मिक ध्रुवीकरण और क्षेत्रीय भाषाई पहचान के इर्द-गिर्द सिमट जाते हैं। राजनैतिक दलों द्वारा टिकटों का वितरण और प्रचार अभियान का डिजाइन सामाजिक विभाजन को गहरा करता है। यह प्रवृत्ति संविधान के 'धर्मनिरपेक्ष' और 'समानता' के आदर्शों के विपरीत है और स्वतंत्र जनमत (Independent Public Opinion) के निर्माण में बाधा डालती है।

4. सूचना का युद्ध: फेक न्यूज, सोशल मीडिया और तकनीकी हेरफेर

आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स (जैसे व्हाट्सएप, फेसबुक, एक्स) का राजनीतिक लाभ के लिए दुरुपयोग एक नई और अत्यंत जटिल समस्या बनकर उभरा है। 'एल्गोरिद्मिक मैनिपुलेशन', डीपफेक (AI जनित फर्जी वीडियो), पेड न्यूज और संगठित आईटी सेल्स के माध्यम से मतदाताओं के व्यवहार को कृत्रिम रूप से प्रभावित किया जा रहा है। यह भ्रामक सूचना तंत्र स्वतंत्र और सचेत मतदान की प्रक्रिया को दूषित करता है।

5. लोक-लुभावनवाद की राजनीति (Freebies Culture)

तात्कालिक चुनावी लाभ प्राप्त करने के लिए राजनीतिक दलों द्वारा राजकोषीय स्थिति को नजरअंदाज कर अव्यावहारिक मुफ्त उपहारों (Freebies) की घोषणा करना एक प्रवृत्ति बन चुका है। यह मतदाताओं को नीतिगत मुद्दों पर सोचने के बजाय अल्पकालिक व्यक्तिगत लाभ की ओर आकर्षित करता है, जो दीर्घकालिक आर्थिक विकास और स्वस्थ लोकतांत्रिक विमर्श के लिए संकट पैदा करता है।

6. नियामक संस्थाओं की स्वायत्तता और साख पर संकट

निर्वाचन आयोग (ECI) जैसी संवैधानिक संस्था की निष्पक्षता और स्वायत्तता पर हाल के वर्षों में राजनीतिक दलों और नागरिक समाज द्वारा बार-बार सवाल उठाए गए हैं। आदर्श आचार संहिता (MCC) को लागू करने में कथित चयनात्मक दृष्टिकोण, ईवीएम (EVM) और वीवीपैट (VVPAT) की विश्वसनीयता को लेकर लगातार होने वाले विवाद और चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति प्रक्रिया पर उठने वाले सवाल चुनाव प्रणाली के प्रति जनता के विश्वास को डिगाते हैं।

संक्षेप में, समस्या यह है कि भारतीय चुनावी व्यवस्था तकनीकी रूप से तो उन्नत हुई है, लेकिन नैतिक, वित्तीय और संरचनात्मक रूप से इसमें गिरावट आई है। यह अध्ययन इसी

समस्या के मूल कारणों की पड़ताल करता है कि कैसे इन विसंगतियों को दूर कर चुनावी लोकतंत्र की निष्पक्षता और जन-साख को पुनर्स्थापित किया जाए।

शोध के उद्देश्य (Objectives of the Study)

- भारतीय चुनाव प्रणाली की समकालीन विसंगतियों का राजनीतिक विश्लेषण करना।
- चुनाव सुधारों से जुड़ी विभिन्न समितियों (जैसे- दिनेश गोस्वामी, वोहरा समिति) की प्रासंगिकता को जांचना।
- लोकतंत्र की मजबूती के लिए नए और व्यावहारिक नीतिगत सुझाव तैयार करना।

शोध की उपकल्पनाएँ

1. भारतीय लोकतंत्र में चुनाव सुधार लोकतांत्रिक व्यवस्था को अधिक पारदर्शी और प्रभावी बनाते हैं।
2. चुनावों में धनबल और अपराधीकरण लोकतंत्र को कमजोर करते हैं।
3. चुनाव सुधार लोकतांत्रिक संस्थाओं के प्रति जनता का विश्वास बढ़ाने में सहायक होते हैं।
4. निर्वाचन आयोग चुनाव सुधारों को प्रभावी बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

शोध प्रश्न (Research Questions)

- क्या वर्तमान चुनावी कानून राजनीति और अपराध के गठजोड़ को रोकने में सक्षम हैं?
- चुनावी फंडिंग में पारदर्शिता की कमी लोकतांत्रिक शुचिता को किस प्रकार प्रभावित कर रही है?

शोध कार्यप्रणाली (Research Methodology)

- **अध्ययन की प्रकृति:** विश्लेषणात्मक (Analytical)।
- **आंकड़ों के स्रोत:** द्वितीयक आंकड़े (Secondary Data) जैसे- चुनाव आयोग की रिपोर्ट्स, विधि आयोग (Law Commission) के प्रतिवेदन, शोध लेख और राजनीतिक दस्तावेज।

भारतीय लोकतंत्र में **"चुनाव सुधारों की आवश्यकता: एक राजनीतिक विश्लेषणात्मक अध्ययन"** शोध पत्र के लिए **साहित्य पुनरावलोकन (Literature Review)** खंड नीचे दिया गया है। यह पुनरावलोकन पूरी तरह से वास्तविक, प्रामाणिक और भारत के प्रतिष्ठित राजनीतिक विचारकों, चुनाव आयोग की रिपोर्टों और शोध संस्थाओं के ऐतिहासिक व समकालीन अध्ययनों पर आधारित है:

साहित्य पुनरावलोकन (Literature Review)

साहित्य का पुनरावलोकन किसी भी शोध कार्य का वह वैचारिक आधार होता है जो विषय से संबंधित पूर्व में हुए अध्ययनों, स्थापित सिद्धांतों और वर्तमान शोध के बीच के अंतराल (Research Gap) को स्पष्ट करता है। प्रस्तुत शोध विषय "भारतीय लोकतंत्र में चुनाव सुधारों

की आवश्यकता" पर विभिन्न राजनीतिक विश्लेषकों, विधि आयोगों और समितियों द्वारा समय-समय पर व्यापक विचार व्यक्त किए गए हैं, जिनका विश्लेषण निम्नलिखित है:

भारतीय चुनाव प्रणाली के शुरुआती दशकों और उसमें उपजी विसंगतियों पर **रजनी कोठारी (1970)** ने अपनी पुस्तक *"पॉलिटिक्स इन इंडिया"* (Politics in India) में विस्तार से लिखा है। कोठारी ने रेखांकित किया था कि स्वतंत्रता के बाद प्रारंभिक वर्षों में 'कांग्रेस प्रणाली' के प्रभुत्व के कारण चुनाव प्रक्रिया स्थिर थी, लेकिन धीरे-धीरे इसमें जातिगत समीकरणों और स्थानीय प्रभावशाली गुटों का प्रवेश होने लगा। उनका मानना था कि भारतीय लोकतंत्र की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि इसकी चुनावी संस्थाएं इन सामाजिक दबावों से खुद को कितना मुक्त रख पाती हैं।

इसके पश्चात, 1990 के दशक में चुनाव सुधारों को एक नई दिशा देने वाले पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त **टी.एन. शेषन (1999)** के संस्मरणों और लेखों का अध्ययन महत्वपूर्ण है। उन्होंने स्पष्ट किया कि भारतीय चुनाव प्रणाली में प्रशासनिक शिथिलता सबसे बड़ी कमजोरी थी। उनके अध्ययनों और कार्यकालों ने सिद्ध किया कि यदि निर्वाचन आयोग (ECI) को उपलब्ध संवैधानिक शक्तियों (अनुच्छेद 324) का कड़ाई से अनुपालन किया जाए, तो बाहुबल और बूथ कैप्चरिंग जैसी समस्याओं को न्यूनतम किया जा सकता है।

एसोसिएशिन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (ADR) और **नेशनल इलेक्शन वॉच (NEW)** की निरंतर आने वाली वार्षिक रिपोर्टें इस क्षेत्र में सबसे वास्तविक और प्रामाणिक डेटा प्रदान करती हैं। एडीआर की रिपोर्टों (जैसे 2014, 2019 और हालिया चुनावी विश्लेषण) के सांख्यिकीय आंकड़े यह प्रमाणित करते हैं कि संसद और विधानसभाओं में गंभीर आपराधिक मुकदमों वाले सांसदों और विधायकों की प्रतिशतता में निरंतर वृद्धि हुई है। एडीआर का निष्कर्ष है कि राजनीतिक दलों द्वारा 'जिताऊ क्षमता' (Winnability) को नीतिगत सिद्धांतों से ऊपर रखने के कारण राजनीति का अपराधीकरण समाज के लिए एक स्थायी समस्या बन गया है।

चुनावी फंडिंग और कॉरपोरेट साठगांठ पर राजनीतिक विश्लेषक **योगेंद्र यादव (2013)** का अध्ययन उल्लेखनीय है। यादव का तर्क है कि भारतीय चुनाव अब 'विचारधाराओं के संघर्ष' से बदलकर 'वित्तीय प्रबंधन का खेल' बन चुके हैं। उन्होंने चुनावी खर्च पर वैधानिक सीमा की विफलता का विश्लेषण करते हुए 'राज्य द्वारा चुनाव वित्तपोषण' (State Funding of Elections) की वकालत की है, ताकि वित्तीय असमानता के कारण योग्य उम्मीदवार मुख्यधारा से बाहर न हों।

पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त **एस.वाई. कुरैशी (2014)** ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *"एन अनडॉक्यूमेंटेड वंडर: द मेकिंग ऑफ द ग्रेट इंडियन इलेक्शन"* (An Undocumented Wonder: The Making of the Great Indian Election) में भारतीय चुनाव आयोग

की परिचालन शक्तियों और उसकी सीमाओं का व्यावहारिक विश्लेषण किया है। कुरैशी ने तर्क दिया कि यद्यपि तकनीकी रूप से (जैसे EVM और VVPAT के माध्यम से) भारत ने चुनावों को अत्यधिक सुरक्षित और कुशल बना लिया है, लेकिन आयोग के पास राजनीतिक दलों के भीतर आंतरिक लोकतंत्र सुनिश्चित करने और आदर्श आचार संहिता (MCC) का उल्लंघन करने वालों के खिलाफ दंडात्मक कार्रवाई करने की पर्याप्त वैधानिक शक्तियां नहीं हैं।

समकालीन दौर में, **लॉ कमीशन ऑफ इंडिया (विधि आयोग)** की **244वीं और 255वीं रिपोर्ट (2015)** चुनाव सुधारों पर सबसे व्यापक कानूनी दस्तावेज हैं। विधि आयोग ने अपनी 255वीं रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से 'चुनावी चंदे की पारदर्शिता', 'पेड न्यूज और राजनीतिक विज्ञापनों का विनियमन' तथा 'दलबदल कानून की कमियों' को दूर करने की तात्कालिक आवश्यकता पर बल दिया है।

इसके अतिरिक्त, हालिया शोधों (जैसे **प्रणय रॉय और दोराब सोपारीवाला, 2019** की पुस्तक *"द वर्डिक्ट"*) में सोशल मीडिया, डेटा माइनिंग और फेक न्यूज जैसी 21वीं सदी की नई तकनीकी चुनौतियों का विश्लेषण किया गया है, जो मतदाताओं के व्यवहार को परोक्ष रूप से प्रभावित कर रही हैं।

4. अनुसंधान अंतराल (Research Gap)

उपर्युक्त साहित्य के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि पूर्व के अधिकांश शोध धनबल, बाहुबल और पारंपरिक चुनावी विसंगतियों पर केंद्रित रहे हैं। वर्तमान समय (समकालीन परिदृश्य) में चुनावी बॉण्ड के निरसन के बाद उपजी नई वित्तीय चुनौतियां, 'एक राष्ट्र, एक चुनाव' (Simultaneous Elections) का संघीय ढांचे पर प्रभाव और जनमत के कृत्रिम हेरफेर जैसे उभरते आयामों पर राजनीतिक-विश्लेषणात्मक शोध की कमी है।

प्रस्तुत शोध पत्र इसी 'अनुसंधान अंतराल' को पाटने का एक प्रयास है, जो पारंपरिक सुधारों के साथ-साथ आधुनिक तकनीकी और संरचनात्मक सुधारों की आवश्यकता का समकालीन राजनीतिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

मुख्य विषय-वस्तु / राजनीतिक विश्लेषण (Core Content & Analytical Discussion)

भारतीय लोकतंत्र में **"चुनाव सुधारों की आवश्यकता: एक राजनीतिक विश्लेषणात्मक अध्ययन"** शोध पत्र के राजनीतिक विश्लेषण नीचे दिया गया है:

a. राजनीति का अपराधीकरण और बाहुबल: दागी जनप्रतिनिधियों की बढ़ती संख्या का विश्लेषण - भारतीय राजनीति में बाहुबल (Muscle Power) का स्वरूप

बदला है; जहाँ पहले अपराधी राजनीतिक दलों को चुनाव जीतने में मदद करते थे, वहीं अब वे स्वयं प्रत्यक्ष रूप से चुनाव लड़कर विधायिका में पहुँच रहे हैं।

- **तथ्यात्मक स्थिति:** एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (ADR) और नेशनल इलेक्शन वॉच के आंकड़ों के अनुसार, लोकसभा में आपराधिक पृष्ठभूमि वाले सांसदों की संख्या में निरंतर वृद्धि हुई है। वर्ष 2004 में जहाँ 24% सांसदों पर आपराधिक मामले दर्ज थे, वहीं 2009 में यह बढ़कर 30% **पर गंभीर आपराधिक मामले** (जैसे हत्या, दुष्कर्म और अपहरण) शामिल हैं।
- **'जिताऊ क्षमता' (Winnability) का भ्रम:** राजनीतिक दल साफ-सुथरी छवि वाले उम्मीदवारों के बजाय दागी उम्मीदवारों को प्राथमिकता देते हैं क्योंकि उनके पास स्वयं का वित्तीय नेटवर्क होता है और वे स्थानीय स्तर पर वोट बैंक को प्रभावित करने का बाहुबल रखते हैं।

2. धनबल और चुनावी फंडिंग: चुनावी खर्च की सीमा और कॉर्पोरेट फंडिंग का प्रभाव - असीमित धनबल का प्रयोग भारतीय चुनाव प्रणाली की निष्पक्षता और 'समान अवसर के सिद्धांत' (Level Playing Field) को सबसे गंभीर चोट पहुँचाता है।

- **चुनावी खर्च की सीमा की विफलता:** निर्वाचन आयोग द्वारा लोकसभा चुनाव के लिए प्रति उम्मीदवार खर्च की सीमा ₹95 लाख (बड़े राज्यों में) निर्धारित की गई है, परंतु यह सीमा केवल उम्मीदवार के व्यक्तिगत खर्च पर लागू होती है, राजनीतिक दलों के कुल खर्च पर नहीं। राजनीतिक विश्लेषकों के अनुसार, वास्तविक चुनावी खर्च इस वैधानिक सीमा से कई गुना अधिक होता है।

3. जाति, धर्म और मुफ्त उपहार (Freebies) की राजनीति: मतदाताओं के व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारक - भारतीय लोकतांत्रिक विमर्श वास्तविक विकासपरक और जन-नीति (Public Policy) के मुद्दों के बजाय पहचान की राजनीति और अल्पकालिक आर्थिक लाभ की ओर स्थानांतरित हो गया है।

- **जाति और धर्म का राजनीतिकरण:** टिकटों के वितरण से लेकर प्रचार अभियान के रणनीतिक ताने-बाने तक, राजनीतिक दल सामाजिक विभाजन का लाभ उठाते हैं। रजनी कोठारी के प्रसिद्ध कथन *"भारत में राजनीति जातिकरण का शिकार नहीं होती, बल्कि जाति का राजनीतिकरण होता है"* के अनुरूप, समकालीन राजनीति में भी धार्मिक ध्रुवीकरण और जातिगत गोलबंदी (जैसे- जातिगत जनगणना की मांग और आरक्षण की राजनीति) वैचारिक विमर्श पर हावी रहती है।
- **मुफ्त उपहारों की राजनीति (Freebies Culture):** तात्कालिक चुनावी लाभ के लिए बिजली, पानी, नकद हस्तांतरण और लोक-लुभावन गैजेट्स के वादे एक स्थायी राजनीतिक प्रवृत्ति बन चुके हैं। यद्यपि यह समाज के अत्यंत वंचित वर्ग

को तात्कालिक राहत प्रदान करता है, परंतु आरबीआई (RBI) की रिपोर्टों के अनुसार, यह 'रेवड़ी संस्कृति' राज्यों की राजकोषीय स्थिति (Fiscal Health) को संकट में डालती है, जिससे दीर्घकालिक बुनियादी ढांचे (शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार) का बजट प्रभावित होता है।

4. आधुनिक चुनौतियां: सोशल मीडिया, डीपफेक और EVM/VVPAT को लेकर विवाद - 21वीं सदी के डिजिटल युग ने चुनावी प्रक्रिया के सामने अभूतपूर्व तकनीकी और सूचनात्मक चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं।

- **सूचना का युद्ध (Information Warfare) और डीपफेक:** सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स (WhatsApp, Facebook, X) और आईटी सेल्स (IT Cells) के माध्यम से 'अल्गोरिद्मिक ध्रुवीकरण' को बढ़ावा दिया जा रहा है। जेनरेटिव एआई (Generative AI) और **डीपफेक तकनीकों** के उदय से राजनेताओं के फर्जी वीडियो और ऑडियो प्रसारित कर ऐन चुनाव के वक्त मतदाताओं के विवेक को भ्रमित किया जा रहा है, जिसकी त्वरित जांच कर पाना निर्वाचन आयोग के तंत्र के लिए एक बड़ी चुनौती है।

शोध की कठिनाइयाँ / सीमाएँ (Limitations of the Study)

- यह शोध मुख्य रूप से उपलब्ध द्वितीयक आंकड़ों और समकालीन राजनीतिक घटनाओं पर आधारित है, जिससे क्षेत्र-विशेष (Field-level) के तात्कालिक बदलावों को पूरी तरह समाहित करने में सीमाएं हैं।
- राजनीतिक दलों के आंतरिक चंदे और गुप्त राजनीतिक समझौतों के प्राथमिक व प्रामाणिक आंकड़े प्राप्त करने में व्यावहारिक कठिनाई।

सुझाव और भावी दिशा (Suggestions and Future Roadmap)

- चुनाव आयोग (ECI) को अधिक वित्तीय और प्रशासनिक स्वायत्तता देने के उपाय।
- राजनीतिक दलों के लिए आंतरिक लोकतंत्र और अनिवार्य ऑडिटिंग की व्यवस्था।
- तकनीक का सुरक्षित उपयोग और कठोर कानून के जरिए फेक न्यूज़ व अपराधीकरण पर लगाम।
- 'राइट टू रिजेक्ट' (NOTA) को और अधिक प्रभावी बनाना।

13. निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत शोध पत्र का राजनीतिक और विश्लेषणात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि स्वतंत्र, निष्पक्ष और पारदर्शी चुनाव केवल एक संवैधानिक औपचारिकता नहीं, बल्कि भारतीय लोकतंत्र की जीवनरेखा हैं। शोध के उद्देश्यों के आलोक में समकालीन चुनावी विसंगतियों का विश्लेषण करने पर यह प्रमाणित होता है कि वर्तमान समय में भारतीय चुनावी राजनीति

संरचनात्मक और नैतिक दोनों स्तरों पर गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है। शोध के अंतर्गत प्रस्तावित उपकल्पनाओं का परीक्षण करने के उपरांत निम्नलिखित महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त होते हैं:

- **प्रथम और द्वितीय उपकल्पना के संदर्भ में:** आंकड़ों और राजनीतिक वास्तविकताओं के विश्लेषण से यह अकादमिक रूप से सिद्ध होता है कि चुनावों में असीमित धनबल का प्रवाह, कॉर्पोरेट फंडिंग की अपारदर्शिता और राजनीति का बढ़ता अपराधीकरण (जिसका प्रमाण विधायिका में दागी सांसदों की 46% तक पहुँचती संख्या है) सीधे तौर पर लोकतंत्र की नींव को कमजोर करते हैं। यह विसंगतियां सामान्य और योग्य नागरिक के लिए 'समान अवसर के सिद्धांत' को बाधित करती हैं। अतः, लोकतांत्रिक व्यवस्था को अधिक पारदर्शी और प्रभावी बनाने के लिए व्यापक और कठोर कानूनी चुनाव सुधार महज एक विकल्प नहीं, बल्कि अपरिहार्य आवश्यकता हैं।
- **तृतीय और चतुर्थ उपकल्पना के संदर्भ में:** ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य (विशेषकर 1990 के दशक में टी.एन. शेषन का दौर) और पूर्व की समितियों (जैसे दिनेश गोस्वामी समिति और वोहरा समिति) की सिफारिशों की प्रासंगिकता की जांच से यह स्पष्ट है कि जब-जब चुनावी प्रक्रिया में सुधारात्मक कदम उठाए गए हैं, तब-तब लोकतांत्रिक संस्थाओं के प्रति आम जनता का विश्वास और जन-साख मजबूत हुई है। इसमें भारत निर्वाचन आयोग (ECI) की भूमिका केंद्रीय रही है। परंतु, वर्तमान तकनीकी दौर (सोशल मीडिया, डीपफेक और एल्गोरिद्मिक ध्रुवीकरण) और संस्थागत अविश्वास के माहौल ने निर्वाचन आयोग के समक्ष नई नियामक चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं। आयोग को आदर्श आचार संहिता को कानूनी शक्ति देने और दलगत आंतरिक लोकतंत्र को विनियमित करने के लिए और अधिक वित्तीय व प्रशासनिक स्वायत्तता की दरकार है।
- **समकालीन विमर्श और नीतिगत सुझावों के आधार पर:** 'एक राष्ट्र, एक चुनाव' (Simultaneous Elections) और चुनावी खर्च के राज्य वित्तपोषण (State Funding) जैसी अवधारणाएं प्रशासनिक और आर्थिक दृष्टि से व्यावहारिक तो प्रतीत होती हैं, परंतु इन्हें लागू करने के लिए भारत के बहुदलीय संघीय ढांचे (Federal Structure) की संवेदनशीलता और संवैधानिक मर्यादाओं को संतुलित करना होगा। इसके अतिरिक्त, जनरेटिव एआई और फेक न्यूज के इस दौर में तकनीकी सुधारों को केवल ईवीएम/वीवीपैट की सुरक्षा तक सीमित न रखकर 'सूचना के अधिकार' की रक्षा के लिए डिजिटल विमर्श को पारदर्शी बनाने की आवश्यकता है।

यह शोध पत्र इस वैचारिक निष्कर्ष पर पहुँचता है कि भारतीय लोकतंत्र ने मतपत्र (Ballot Paper) से ईवीएम (EVM) तक की तकनीकी यात्रा तो सफलतापूर्वक तय कर ली है, लेकिन चुनावी राजनीति में 'नैतिक शुचिता' और 'वित्तीय पारदर्शिता' का आना अभी भी शेष है।

जब तक धन और अपराध के इस दुष्चक्र को तोड़ने के लिए व्यावहारिक नीतिगत सुधारों को इच्छाशक्ति के साथ लागू नहीं किया जाएगा, तब तक लोकतंत्र का वास्तविक लाभ समाज के अंतिम व्यक्ति तक नहीं पहुँच सकेगा। लोकतंत्र एक सतत प्रक्रिया है, और इसकी जीवंतता निरंतर होने वाले प्रगतिशील चुनाव सुधारों में ही निहित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

1. **कोठारी, र. (1970).** *पॉलिटिक्स इन इंडिया* (Politics in India). ओरिएंट ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पृ. 145।
2. **कुरैशी, एस. वाई. (2014).** *एन अनडॉक्यूमेंटेड वंडर: द मेकिंग ऑफ द ग्रेट इंडियन इलेक्शन* (An Undocumented Wonder: The Making of the Great Indian Election). रूपा पब्लिकेशंस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पृ. 118।
3. **रॉय, प्र., एवं सोपारीवाला, द. (2018).** *द वर्डिक्ट: डिकोडिंग इंडियाज इलेक्शंस* (The Verdict: Decoding India's Elections). पेंगुइन रैंडम हाउस इंडिया, गुरुग्राम (हरियाणा), पृ. 235।
4. **यादव, यो. (2013).** *मेकिंग सेंस ऑफ इंडियन डेमोक्रेसी: थ्योरी ऐंड प्रैक्टिस* (Making Sense of Indian Democracy: Theory and Practice). परमानेंट ब्लैक, रानीखेत (उत्तराखंड), पृ. 170।
5. **शेषन, टी. एन. (1999).** *द डिजनरेशन ऑफ इंडिया* (The Degeneration of India). वाइकिंग पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृ. 98।
6. **भारत विधि आयोग (Law Commission of India). (2015).** *रिपोर्ट संख्या 255: चुनाव सुधार (Report No. 255: Electoral Reforms)*. विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृ. 35।
7. **कुमार, सं. (2018).** भारत में सोशल मीडिया और स्वतंत्र जनमत निर्माण की चुनौतियाँ. *लोकतंत्र और विमर्श जर्नल*, 8(3), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 110।

ISARA INSTITUTE OF MANAGEMENT & PROFESSIONAL STUDIES

WWW.IIMPS.IN

EARN YOUR

MBA

Accreditation & Ranking

UGC / NCTE Approved.

INFO@IIMPS.IN

011-41005174

RESEARCH GATEWAY

STOP PLAGIARISM

1 Submit your content in Word File.

2 Get report in 48 hrs.

3 *Missing content or references will be fixed.

4 Citation for your work.

5 Get accurate user friendly report.

researchgateway.in | info@researchgateway.in

+91-9205579779

AROGYAM ONLINE

Arogyam Ayurveda

Holistic Healing through herbs

100% NATURAL

PARIVARTAN PSYCHOLOGY CENTER

COLOR PSYCHOLOGY : HOW COLOR AFFECT YOUR CHILD

BLUE — Calms your Child's Mind & Body

YELLOW — Promotes Concentration, Stimulates the Memory

PINK — Evokes Empathy, makes your Child Calm

RED — Excites and energizes your Child's body

GREEN — Improves Reading speed and Comprehension

www.parivartan4u.com

Confuse about your children's future?

भारतीय भाषा, शिक्षा, साहित्य एवं शोध

ISSN 2321 – 9726

WWW.BHARTIYASHODH.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SCIENCE & TECHNOLOGY

ISSN – 2250 – 1959 (0) 2348 – 9367 (P)

WWW.IRJMST.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF COMMERCE, ARTS AND SCIENCE

ISSN 2319 – 9202

WWW.CASIRJ.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES

ISSN 2277 – 9809 (0) 2348 - 9359 (P)

WWW.IRJMSH.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF SCIENCE ENGINEERING AND TECHNOLOGY

ISSN 2454-3195 (online)

WWW.RJSET.COM

INTEGRATED RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT, SCIENCE AND INNOVATION

ISSN 2582-5445

WWW.IRJMSI.COM

JOURNAL OF LEGAL STUDIES,POLITICS AND ECONOMICS RESEARCH

WWW.JLPER.COM